Digitization by eGangotri-South Center

श्रीमदाद्यशङ्कराचार्यप्रणीता

सौन्दर्यलहरी

पाया ह

संपादक

नारायण राम आचार्य काव्यतीर्थ

१९६१

निर्णयसागर मुद्रणालय, मुंबई २

मूल्य ३५ नये पैसे

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

–सर्व अधिकार सुरक्षित –

मुद्रक–प्रकाशक
लक्ष्मीबाई नारायण चौधरी
निर्णयसागर प्रेस,
२६–२८ क्रोलभाट स्ट्रीट, मुंबई नं. २

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

सौन्दर्यलहरी का परिचय

[संग्राहकः–नारायण राम आचार्य]

यह दुनियाँ एक गहरा सागर है। इस भवसागर में जन्मीभूत प्राणिमात्र को पता नहीं स्वयं वह कौन है, किस कारण इस दुनियाँ में उसने जन्म पाया है, फिर कहाँ जाने वाला है, और किस लिए, अत एव यह सामान्य मानव को न सुलझने वाली एक पहेली है जिसी को हम 'माया' मानते हैं। जब प्राणी जन्म लेता है तभी से अपने तन-मन पर यह सवार होती है। और वह उसी में फंस जाता है, परिणामतः वह प्राणी अपने आपको याने पूर्व-जन्मीय असलीयत को भूल जाता है और माँ, बाप, बहेन, भाई इनके ही साथ अपनी रिश्तेदारी लगाकर सांसारिक फेरे में फंस जाता है। इस तरह समय गुजरते गुजरते वह माया का शिकार बन जाता है। इस खतरनाक बन्धन से छुटकारा पाने का–आत्मसाक्षात्कार–का नाम ही मोक्षप्राप्ति है। हर एक प्राणी पानी में डूबने वाले प्राणी की तरह मोक्षप्राप्ति के लिए कर्ममार्ग, ज्ञान-मार्ग और भक्तिमार्ग आदि साधनों में से किसी एक का सहारा लेता है।

'प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरं येषु कर्म।
एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्ति मूढा जरामृत्युं ते पुनरेवापि यन्ति॥'
(मुण्डकोप० २।७)

[अर्थः– कर्ममार्ग-यज्ञमार्गरूपी नौकाएँ जिसमें अठारह (सोलह ऋत्विज्, एक यजमान और उनकी धर्मपत्नी) से फलकामनार्थ साध्य हलके दर्जे का काम बताया है–वे निहायत कमजोर हैं। इनको ही साधन समझने वाले अज्ञानी प्राणी अन्ध पर विश्वास रख कर चलनेवाले अन्ध यात्री की तरह स्वर्गादि साध्य को प्राप्त कर फिर इस बुढापा, जन्म–मरण के चक्कर में सचमुच फँस जाते हैं।]

इस उपनिषद्वाक्य में कर्ममार्ग अदृढ अस्थायी याने कच्चा मार्ग बतलाया है। क्योंकि, इस कर्ममार्गियों की फलश्रुति भगवद्गीता में स्वयं श्रीकृष्ण ने 'क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति' इन शब्दों में की है। ज्ञानमार्ग आम जनता के लिये बडा भारी व्यापक और केवल अधिकारी लोगों के लिये ही

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

सरल कहा है। भक्तिमार्ग सुलभ होते हुए भी वह लम्बा एवं प्रयत्नसाध्य है, और इतना वह आसान नहीं कि हर इन्सान उसमें सफलता की प्राप्ति फौरन कर सके।

वैदिक वाङ्मय में तुरन्त साध्य ऐसे दो अवतार प्रसिद्ध हैं। त्रिपुरासुंदरी और गुरु अवधूत। इन दोनों में त्रिपुरासुन्दरी सचमुच 'माँ' की तरह अपने भक्तों की पुकार कभी खाली जाने नहीं देती। आखिर तो माँ का ही वात्सल्य-पूर्ण हृदय है! इस प्यारभरा दिल का ही सौन्दर्यलहरी या आनन्दलहरी नामक स्तोत्र का पुराने जमाने का एक किस्सा है। यह एक प्रतिभापूर्ण वैदिक पार्श्व-भूमि पर बनाया तन्त्रशास्त्र का रहस्यमय स्तोत्र है, जिसमें त्रिपुरासुन्दरी के सौन्दर्य-सागर के भक्तिप्रधान वर्णन के अपदेश से षट्चक्रात्मक सहस्र पांखडी वाले कमल में सत्-चित् स्वरूप में जीवात्मा और परमात्मा के मीलन रूपी कैवल्यप्राप्ति का वर्णन एक अनोखी रीत से श्रीमत्परमहंस परिव्राजक आद्य शङ्कराचार्यजी ने अपनी युवावस्था में किया है।

इस स्तोत्र के निर्माता कौन इस विषय में भी एक सवाल कई एक अर्वाचीन विद्वानों ने उपस्थित किया है। इस स्तोत्र पर करीब ३०–३५ टीकाएँ हैं। प्रायः सभी टीकाकार श्रीशङ्कराचार्यजी की ही यह कृति है ऐसा मानते हैं। ललितासहस्रनाम के सौभाग्यभास्कर भाष्य के ७२ वें पद्य के विवरण में भास्करराय ने 'श्रीमदाचार्यभगवत्पादैरप्युक्तम्–"शिवः शक्त्या युक्तो"–' इस सौन्दर्यलहरी के प्रथम श्लोक को उद्धृत किया है, और प्रायः सभी व्याख्याकारों के मत से भी इस स्तोत्र के प्रणेतृत्व आद्य शंकराचार्य का ही निर्णीत होता है।

आद्य शङ्कराचार्यजी का जन्म कलदी नामक देहात (त्रावनकोर–कोचीन स्टैट) में इसाई ७-८ शताब्दियों के बीच हुआ ऐसी इतिहास–विज्ञों की राय है। श्रीशंकराचार्यजी के समय के बारे में सचमुच बडा मतभेद है। शंकर संप्रदाय और मठों की आचार्य परम्परा की दृष्टि से ईसा से चार पांच सो वर्ष प्रथम शंकराचार्यजी का आविर्भाव हुआ है ऐसी मान्यता है। आधुनिक अन्वेषकों ने पांचवीं-छट्टीं और कई एक की राय से सातवीं-आठवीं शताब्दी ही शंकराचार्यजी का समय माना है। मठों और आचार्यों की परम्परा आदि के विचार से

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अधिकांश विद्वानों ने उन्हें ईसा के पूर्व का ही माना है। श्रीशंकराचार्यजी के गुरु गोविन्दपाद जिन का आश्रम नर्मदा नदी के किनारे पर था और उनके गुरु श्रीगौडपादाचार्य थे ऐसा विद्यारण्यकृत शंकरविजय से और सम्प्रदाय-परम्परा और इतिहास से भी प्रसिद्ध है। कई एक विद्वानों की यह भी राय है, कि इस स्तोत्र के आदिम आठ श्लोक जो आनन्दलहरी नाम से प्रसिद्ध हैं वे गौडपादाचार्यप्रणीत हैं।

शङ्कराचार्यजी के पूज्य पिता परम कर्मठ, सनातन धर्म के कट्टर अभिमानी एवं परम उपासक और जगद्वन्द्या त्रिपुरासुन्दरी के अनन्य-भक्त थे। आप हमेशा सुबह श्रौत स्मार्त कर्मों में ही अपना समय व्यतीत करते थे। तत्पश्चात् अपने गाँव के बहार जगन्माता त्रिपुरासुन्दरी के मन्दिर में जाकर देवी का समन्त्रक दुग्धस्नान, षोडशोपचार पूजा-पाठ आदि अनुष्ठान यथासाङ्ग अदा कर घर लौटते थे। घर आने बाद कटोरी में अवशिष्ट दुग्ध अपने सुपुत्र को दे देते थे। शङ्कराचार्यजी मानते थे कि पिताजी के हाथों से देवी स्वयं कटोरी में से दुग्ध-प्राशन करती है, अवशिष्ट दुग्ध प्रसादी के नाते मुझे मिलता है। इसी समझ के हेतु वे आदर से हर दिन माताजी की प्रसादी (अवशिष्ट कुछ दूध) को परम भक्तिभाव से पीकर अपने को धन्य मानते थे। यह उस परिवार का एक रोजाना कार्यक्रम था। किसी एक दिन कार्यवशात् शङ्कराचार्यजी के पिताश्री को दूसरे गाँव जाना अत्यावश्यक हुआ। जाते समय अपनी धर्मपत्नी को कह गये, "मैं चन्द दिनों के लिये शहर में जा रहा हूँ, मेरी अनुपस्थिति में दैनन्दिन व्यवहार के साथ साथ जगन्माता त्रिपुरासुन्दरी की पूजा भी हरदिन मेरी तरह करते रहना। भूलना नहीं।" उनके विदा होने के बाद उक्त प्रस्ताव के अनुसार कार्य हरदिन होता रहा। चन्द दिनों के बाद (शङ्कराचार्यजी) की जननी स्वयं मासिक धर्म के वजह धार्मिक अनुष्ठान में अनधिकारित्व जान कर अपने लाडले (श्रीशङ्कराचार्यजी) को बोलीं: 'बच्चे, देखो; अपने पिताजी का इष्ट दैवत त्रिपुरासुन्दरी का मन्दिर जो अपने गाँव के नोक पर है, वहाँ जाकर भक्तिभाव से इस पूजा सामग्री द्वारा पूजा और प्रार्थना करके आवो।' माँ के आदेश को ध्यान देकर सुना और परिपालन करने गये। पूजा भी भक्तिभाव से की। पर प्रार्थना के बाद आंख खोलकर देखने पर नैवेद्य के लिये रक्खी हुई कटोरी छलाछल भरी हुई जैसी की वैसी देख बडा दुःख हुआ।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मन में सोचने लगे : क्यों माँ ! माँ–पिताजी ने अर्पण किये नैवेद्य को आप हरदिन लेती रहीं, और आज मेरा भक्तिभाव कुछ उनसे कम समझ कर आप मेरे पर रूठ गईं, जिस कारण दुग्ध–प्राशन नहीं किया ? मैं उसी *द्रविड का बालक हूं, जो आप को नैवेद्य नित्य देते रहे। इसे स्वीकार न करेंगी तो मैं आप का भक्त–बदनाम बनूंगा। मेरी यही प्रार्थना है, कि आप इस दुग्ध का प्राशन करें और मेरी माँ ने सोंपी हुई जिम्मेवारी पूरी कर मेरा यत्न सफल करें। पूज्य शंकराचार्यजी कृत यही वह मन्त्रगर्भित प्रार्थना है जो सौन्दर्यलहरी के नाम से प्रथित हुई। नतीजा यह हुवा कि इस स्तुति से त्रिपुरासुन्दरी उस मासुम बच्चे के करुणामय मन्त्रगर्भित शब्दों से प्रसन्न हुई और स्वयं सगुण स्वरूप में उपस्थित होकर दुग्धप्राशन किया। तत्पश्चात् स्तन्यपान देकर शङ्कराचार्यजी को *आशीर्वाद दिया। श्रीशङ्कराचार्यजी ने भी बडे प्रसन्न चित्त से घर जाकर यह वृत्त यथावत् अपनी माँ को निवेदित किया। जिसे सुन कर माँ भी आनन्दविभोर हुई, पर उस वृत्तान्त की सचाई पर जरूर कुछ साशङ्कित हुई। दूसरे दिन जब श्रीशङ्कराचार्यजी के पिताजी को यह वृत्त माँ-पुत्र के द्वारा निवेदित हुआ तब वे भी चकित हो गये और सच मानने तैयार न हुए। आखिर त्रिपुरासुन्दरी ने माँ-बाप को स्वप्न में दर्शन देकर तसल्ली दी कि आप के पुत्र ने जो वृत्त कहा है वह यथार्थ है, आप का यह सुपुत्र मेरे अनुग्रह से एक वेदान्त-मार्गनिदर्शक महापुरुष बनेगा और उसकी उज्वल कीर्ति भारतवर्ष में ही नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व में अजरामर रहेगी।

यह स्तोत्र रहस्यमय और मन्त्रगर्भित है। इसका पाठ श्रद्धा–ध्यान लगाकर पठन करने से त्रिपुरासुन्दरी का अनुग्रह तुरन्त पाया जाता है। इस स्तोत्र का पाठ ऐहिक–पारत्रिक साधना के लिये सर्वत्र अनुभूत है, दक्षिण भारत में इस स्तोत्र का अनुभव घर घर में आबालवृद्ध–विदित है।

---

* यही मतलब निम्नलिखित पद्य में विशद किया है—

तव स्तन्यं मन्ये धरणिधरकन्ये ! हृदयतः पयःपारावारः परिवहति सारस्वत इव।
दयावत्या दत्तं द्रविडशिशुरास्वाद्य तव यत् कवीनां प्रौढानामजनि कमनीयः कवयिता ॥
—सौन्दर्यलहरी श्लो. ७५

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

श्रीमद्भगवत्पूज्यपादश्रीमदाद्यशङ्कराचार्यप्रणीता

सौन्दर्यलहरी

(आनन्दलहरीत्यपरनामधेया)

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं,
न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ।
अतस्त्वामाराध्यां हरिहरविरञ्च्यादिभिरपि,
प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति ॥ १ ॥

तनीयांसं पांसुं तव चरणपङ्केरुहभवं,
विरिञ्चिः सञ्चिन्वन् विरचयति लोकानविकलम् ।
वहत्येनं शौरिः कथमपि सहस्रेण शिरसां,
हरः सङ्क्षुभ्यैनं भजति भसितोद्धूलनविधिम् ॥ २ ॥

अविद्यानामन्तस्तिमिरमिहिरद्वीपनगरी,
जडानां चैतन्यस्तबकमकरन्दस्रुतिझरी ।
दरिद्राणां चिन्तामणिगुणनिका जन्मजलधौ,
निमग्नानां दंष्ट्रा मुररिपुवराहस्य भवती ॥ ३ ॥

त्वदन्यः पाणिभ्यामभयवरदो दैवतगणः,
त्वमेका नैवासि प्रकटितवराभीत्यभिनया ।
भयात्त्रातुं दातुं फलमपि च वाञ्छासमधिकं,
शरण्ये ! लोकानां तव हि चरणावेव निपुणौ ॥ ४ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

हरिस्त्वामाराध्य प्रणतजनसौभाग्यजननीं,
पुरा नारी भूत्वा पुररिपुमपि क्षोभमनयत् ।
स्मरोऽपि त्वां नत्वा रतिनयनलेह्येन वपुषा,
मुनीनामप्यन्तः प्रभवति हि मोहाय महताम् ॥ ५ ॥

धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी पञ्च विशिखा,
वसन्तः सामन्तो मलयमरुदायोधनरथः ।
तथाप्येकः सर्वं हिमगिरिसुते ! कामपि कृपा,—
मपाङ्गात्ते लब्ध्वा जगदिदमनङ्गो विजयते ॥ ६ ॥

क्वणत्काञ्चीदामा करिकलभकुम्भस्तनभरा,
परिक्षीणा मध्ये परिणतशरच्चन्द्रवदना ।
धनुर्बाणान् पाशं सृणिमपि दधाना करतलैः,
पुरस्तादास्तां नः पुरमथितुराहोपुरुषिका ॥ ७ ॥

सुधासिन्धोर्मध्ये सुरविटपिवाटीपरिवृते,
मणिद्वीपे नीपोपवनवति चिन्तामणिगृहे ।
शिवाकारे मञ्चे परमशिवपर्यङ्कनिलयां,
भजन्ति त्वां धन्याः कतिचन चिदानन्दलहरीम् ॥८॥

महीं मूलाधारे कमपि मणिपूरे हुतवहं,
स्थितं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुतमाकाशमुपरि ।
मनोऽपि भ्रूमध्ये सकलमपि भित्त्वा कुलपथं,
सहस्रारे पद्मे सह रहसि पत्या विहरसि ॥ ९ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

सुधाधारासारैश्चरणयुगलान्तर्विगलितैः,
प्रपञ्चं सिञ्चन्ती पुनरपि रसाम्नायमहसः ।
अवाप्य स्वां भूमिं भुजगनिभमध्युष्टवलयं,
स्वमात्मानं कृत्वा स्वपिषि कुलकुण्डे कुहरिणि ॥ १०॥

चतुर्भिः श्रीकण्ठैः शिवयुवतिभिः पञ्चभिरपि,
प्रभिन्नाभिः शम्भोर्नवभिरिति मूलप्रकृतिभिः ।
त्रयश्चत्वारिंशद्वसुदलकलास्त्रित्रिवलय,—
त्रिरेखाभिः सार्धं तव चरणकोणाः परिणताः॥ ११ ॥

त्वदीयं सौन्दर्यं तुहिनगिरिकन्ये ! तुलयितुं,
कवीन्द्राः कल्पन्ते कथमपि विरिञ्चिप्रभृतयः ।
यदालोकौत्सुक्यादमरललना यान्ति मनसा,
तपोभिर्दुष्प्रापामपि गिरिशसायुज्यपदवीम् ॥ १२ ॥

नरं वर्षीयांसं नयनविरसं नर्मसु जडं,
तवापाङ्गालोके पतितमनुधावन्ति शतशः ।
गलद्वेणीबन्धा कुचकलशविस्रस्तसिचया,
हठात् त्रुट्यत्काञ्च्यो विगलितदुकूला युवतयः ॥ १३ ॥

क्षितौ षट्पञ्चाशद् द्विसमधिकपञ्चाशदुदके,
हुताशे द्वाषष्टिश्चतुरधिकपञ्चाशदनिले ।
दिवि द्विःषट्त्रिंशन्मनसि च चतुःषष्टिरिति ये,
मयूखास्तेषामप्युपरि तव पादाम्बुजयुगम् ॥ १४ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

शरज्योत्स्नाशुभ्रां शशियुतजटाजूटमुकुटां,
वरत्रासत्राणस्फटिकगुटिकापुस्तककराम् ।
सकृन्न त्वा नत्वा कथमिव सतां सन्निदधते,
मधुक्षीरद्राक्षामधुरिमधुरीणा भणितयः ॥ १५ ॥

कवीन्द्राणां चेतःकमलवनबालातपरुचिं,
भजन्ते ये सन्तः कतिचिदरुणामेव भवतीम् ।
विरिञ्चिप्रेयस्यास्तरलतरशृङ्गारलहरी,–
गभीराभिर्वाग्भिर्विदधति सतां रञ्जनममी ॥ १६ ॥

सवित्रीभिर्वाचां शशिमणिशिलाभङ्गरुचिभि,–
र्वशिन्याद्याभिस्त्वां सह जननि ! सञ्चिन्तयति यः ।
स कर्ता काव्यानां भवति महतां भङ्गसुभगै,–
र्वचोभिर्वाग्देवीवदनकमलामोदमधुरैः ॥ १७ ॥

तनुच्छायाभिस्ते तरुणतरणिश्रीसरणिभि,–
र्दिवं सर्वामुर्वीमरुणिमनिमग्नां स्मरति यः ।
भवन्त्यस्य त्रस्यद्वनहरिणशालीननयनाः,
सहोर्वश्या वश्याः कति कति न गीर्वाणगणिकाः ॥१८॥

मुखं बिन्दुं कृत्वा कुचयुगमधस्तस्य तदधो,
हरार्धं ध्यायेद्यो हरमहिषि ! ते मन्मथकलाम् ।
स सद्यः सङ्क्षोभं नयति वनिता इत्यतिलघु,
त्रिलोकीमप्याशु भ्रमयति रवीन्दुस्तनयुगाम् ॥ १९ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

किरन्तीमङ्गेभ्यः किरणनिकुरम्बामृतरसं,
हृदि त्वामाधत्ते हिमकरशिलामूर्तिमिव यः ।
स सर्पाणां दर्पं शमयति शकुन्ताधिप इव,
ज्वरप्लुष्टान् दृष्ट्या सुखयति सुधाधारसिरया ॥ २० ॥

तडिल्लेखातन्वीं तपनशशिवैश्वानरमयीं,
निषण्णां षण्णामप्युपरि कमलानां तव कलाम् ।
महापद्माटव्यां मृदितमलमायेन मनसा,
महान्तः पश्यन्तो दधति परमाह्लादलहरीम् ॥ २१ ॥

भवानि ! त्वं दासे मयि वितर दृष्टिं सकरुणां,
इति स्तोतुं वाञ्छन् कथयति भवानि त्वमिति यः ।
तदैव त्वं तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं,
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुटनीराजितपदाम् ॥ २२ ॥

त्वया हृत्वा वामं वपुरपरितृप्तेन मनसा,
शरीरार्धं शम्भोरपरमपि शङ्के हृतमभूत् ।
तथा हि त्वद्रूपं सकलमरुणाभं त्रिनयनं,
कुचाभ्यामानम्रं कुटिलशशिचूडालमुकुटम् ॥ २३ ॥

जगत्सूते धाता हरिरवति रुद्रः क्षपयते,
तिरस्कुर्वन्नेतत्स्वमपि वपुरीशस्तिरयति ।
सदापूर्वः सर्वं तदिदमनुगृह्णाति च शिव,—
स्तवाज्ञामालम्ब्य क्षणचलितयोर्भ्रूलतिकयोः ॥ २४ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

त्रयाणां देवानां त्रिगुणजनितानां तव शिवे !,
भवेत्पूजा पूजा तव चरणयोर्या विरचिता ।
तथा हि त्वत्पादोद्वहनमणिपीठस्य निकटे,
स्थिता ह्येते शश्वन्मुकुलितकरोत्तंसमुकुटाः ॥ २५ ॥

विरिञ्चिः पञ्चत्वं व्रजति हरिराप्नोति विरतिं,
विनाशं कीनाशो भजति धनदो याति निधनम् ।
वितन्द्री माहेन्द्री विततिरपि सम्मीलितदृशा,
महासंहारेऽस्मिन् विहरति सति त्वत्पतिरसौ ॥ २६ ॥

जपो जल्पः शिल्पं सकलमपि मुद्राविरचना,
गतिः प्रादक्षिण्यक्रमणमशनाद्याहुतिविधिः ।
प्रणामः संवेशः सुखमखिलमात्मार्पणदृशा,
सपर्यापर्यायस्तव भवतु यन्मे विलसितम् ॥ २७ ॥

ददाने दीनेभ्यः श्रियमनिशमाशानुसदृशी,–
ममन्दं सौन्दर्यप्रकरमकरन्दं विकिरति ।
तवास्मिन्मन्दारस्तबकसुभगे यातु चरणे,
निमज्जन् मज्जीवः करणचरणैः षट्चरणताम् ॥ २८ ॥

सुधामप्यास्वाद्य प्रतिभयजरामृत्युहरिणीं,
विपद्यन्ते विश्वे विधिशतमखाद्या दिविषदः ।
करालं यत्क्ष्वेडं कवलितवतः कालकलना,
न शम्भोस्तन्मूलं तव जननि ताटङ्कमहिमा ॥ २९ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

किरीटं वैरिञ्चं परिहर पुरः कैटभभिदः,
कठोरे कोटीरे स्खलसि जहि जम्भारिमुकुटम् ।
प्रणम्रेष्वेतेषु प्रसभमभियातस्य भवनं,
भवस्याभ्युत्थाने तव परिजनोक्तिर्विजयते ॥ ३० ॥

चतुःषष्ट्या तन्त्रैः सकलमभिसन्धाय भुवनं,
स्थितस्तत्तत्सिद्धिप्रसवपरतन्त्रैः पशुपतिः ।
पुनस्त्वन्निर्बन्धादखिलपुरुषार्थैकघटना,—
स्वतन्त्रं ते तन्त्रं क्षितितलमवातीतरदिदम् ॥ ३१ ॥

शिवः शक्तिः कामः क्षितिरथ रविः शीतकिरणः,
स्मरो हंसः शक्रस्तदनु च परमारहरयः ।
अमी हृल्लेखाभिस्तिसृभिरवसानेषु घटिता,
भजन्ते वर्णास्ते तव जननि ! नामावयवताम् ॥ ३२ ॥

स्मरं योनिं लक्ष्मीं त्रितयमिदमादौ तव मनो-
र्निधायैके नित्ये निरवधिमहाभोगरसिकाः ।
जपन्ति त्वां चिन्तामणिगुणनिबद्धाक्षवलयाः,
शिवाग्नौ जुह्वन्तः सुरभिघृतधाराहुतिशतैः ॥ ३३ ॥

शरीरं त्वं शम्भोः शशिमिहिरवक्षोरुहयुगं,
तवात्मानं मन्ये भगवति ! तवात्मानमनघम् ।
अतः शेषः शेषीत्ययमुभयसाधारणतया,
स्थितः सम्बन्धो वां समरसपरानन्दपरयोः ॥ ३४ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मनस्त्वं व्योम त्वं मरुदसि मरुत्सारथिरसि,
त्वमापस्त्वं भूमिस्त्वयि परिणतायां न हि परम् ।
त्वमेव स्वात्मानं परिणमयितुं विश्ववपुषा,
चिदानन्दाकारं शिवयुवति ! भावेन बिभृषे ॥ ३५ ॥

तवाज्ञाचक्रस्थं तपनशशिकोटिद्युतिधरं,
परं शम्भुं वन्दे परिमिलितपार्श्वं परचिता ।
यमाराध्यन् भक्त्या रविशशिशुचीनामविषये,
निरालोके लोको निवसति हि भालोकभुवने ॥ ३६ ॥

विशुद्धौ ते शुद्धस्फटिकविशदं व्योमजनकं,
शिवं सेवे देवीमपि शिवसमानव्यसनिनीम् ।
ययोः कान्त्या यान्त्या शशिकिरणसारूप्यसरणिं,
विधूतान्तर्ध्वान्ता विलसति चकोरीव जगति ॥ ३७ ॥

समुन्मीलत्संवित्कमलमकरन्दैकरसिकं,
भजे हंसद्वन्द्वं किमपि महतां मानसचरम् ।
यदालापादष्टादशगुणितविद्यापरिणति-
र्यदादत्ते दोषाद्गुणमखिलमद्भ्यः पय इव ॥ ३८ ॥

तव स्वाधिष्ठाने हुतवहमधिष्ठाय निरतं,
तमीडे संवर्तं जननि महतां तां च समयाम् ।
यदालोके लोकान् दहति महति क्रोधकलिले,
दयार्द्रा ते दृष्टिः शिशिरमुपचारं रचयति ॥ ३९ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

तडित्वन्तं शक्त्या तिमिरपरिपन्थिस्फुरणया,
स्फुरन्नानारत्नाभरणपरिणद्धेन्द्रधनुषम् ।
तव श्यामं मेघं कमपि मणिपूरैकशरणं,
निषेवे वर्षन्तं हरमिहिरतप्तं त्रिभुवनम् ॥ ४० ॥

तवाधारे मूले सह समयया लास्यपरया,
नवात्मानं मन्ये नवरसमहाताण्डवनटम् ।
उभाभ्यामेताभ्यामुदयविधिमुद्दिश्य दयया
सनाथाभ्यां जज्ञे जनकजननीमज्जगदिदम् ॥ ४१ ॥

गतैर्माणिक्यत्वं गगनमणिभिः सान्द्रघटितं,
किरीटं ते हैमं हिमगिरिसुते कीर्तयति यः ।
स नीडेयच्छायाच्छुरणशबलं चन्द्रशकलं,
धनुः सौनासीरं किमिति न निबध्नाति धिषणाम् ॥४२॥

धुनोतु ध्वान्तं नस्तुलितदलितेन्दीवरवनं,
घनस्निग्धं श्लक्ष्णं चिकुरनिकुरम्बं तव शिवे ।
यदीयं सौरभ्यं सहजमुपलब्धुं सुमनसो,
वसन्त्यस्मिन् मन्ये वलमथनवाटीविटपिनाम् ॥ ४३ ॥

वहन्ती सिन्दूरं प्रबलकबरीभारतिमिर-
त्विषां वृन्दैर्बन्दीकृतमिव नवीनार्ककिरणम् ।
तनोतु क्षेमं नस्तव वदनसौन्दर्यलहरी,-
परीवाहस्रोतःसरणिरिव सीमन्तसरणिः ॥ ४४ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अरालैः स्वाभाव्यादलिकलभसश्रीभिरलकैः,
परीतं ते वक्त्रं परिहसति पङ्केरुहरुचिम् ।
दरस्मेरे यस्मिन् दशनरुचिकिञ्जल्करुचिरे,
सुगन्धौ माद्यन्ति स्मरमथनचक्षुर्मधुलिहः ॥ ४५ ॥

ललाटं लावण्यद्युतिविमलमाभाति तव यद्,
द्वितीयं तन्मन्ये मुकुटशशिखण्डस्य शकलम् ।
विपर्यासन्यासादुभयमपि सम्भूय च मिथः,
सुधालेपस्यूतिः परिणमति राकाहिमकरः ॥ ४६ ॥

भ्रुवौ भुग्ने किञ्चिद्भुवनभयभङ्गव्यसनिनि,
त्वदीये नेत्राभ्यां मधुकररुचिभ्यां धृतगुणे ।
धनुर्मन्ये सव्येतरकरगृहीतं रतिपतेः,
प्रकोष्ठे मुष्टौ च स्थगयति निगूढान्तरमुमे ! ॥ ४७ ॥

अहः सूते दक्षं तव नयनमर्कात्मकतया,
त्रियामां वामं ते सृजति रजनीनायकमयम् ।
तृतीया ते दृष्टिर्दरदलितहेमाम्बुजरुचिः,
समाधत्ते सन्ध्यां दिवसनिशयोरन्तरचरीम् ॥ ४८ ॥

विशाला कल्याणी स्फुटरुचिरयोध्या कुवलयैः,
कृपाधाराधारा किमपि मधुरा भोगवतिका ।
अवन्ती दृष्टिस्ते बहुनगरविस्तारविजया,
ध्रुवं तत्तन्नामव्यवहरणयोग्या विजयते ॥ ४९ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

कवीनां सन्दर्भस्तबकमकरन्दैकरसिकं,
कटाक्षव्याक्षेपभ्रमरकलभौ कर्णयुगलम् ।
अमुञ्चन्तौ दृष्ट्वा तव नवरसास्वादतरला-
वसूयासंसर्गादलिकनयनं किञ्चिदरुणम् ॥ ५० ॥

शिवे शृङ्गारार्द्रा तदितरमुखे कुत्सनपरा,
सरोषा गङ्गायां गिरिशचरिते विस्मयवती ।
हराहिभ्यो भीता सरसिरुहसौभाग्यजयिनी,
सखीषु स्मेरा ते जननि ! मयि दृष्टिः सकरुणा ॥५१॥

गते कर्णाभ्यर्णं गरुत इव पक्ष्माणि दधती,
पुरां भेत्तुश्चित्तप्रशमरसविद्रावणफले ।
इमे नेत्रे गोत्राधरपतिकुलोत्तंसकलिके,
तवाकर्णाकृष्टस्मरशरविलासं कलयतः ॥ ५२ ॥

विभक्तत्रैवर्ण्यं व्यतिकरितनीलाञ्जनतया,
विभाति त्वन्नेत्रत्रितयमिदमीशानदयिते ! ।
पुनः स्रष्टुं देवान् द्रुहिणहरिरुद्रानुपरतान्,
रजः सत्त्वं विभ्रत्तम इति गुणानां त्रयमिव ॥ ५३ ॥

पवित्रीकर्तुं नः पशुपतिपराधीनहृदये !,
दयामित्रैर्नेत्रैररुणधवलश्यामरुचिभिः ।
नदः शोणो गङ्गा तपनतनयेति ध्रुवममुं,
त्रयाणां तीर्थानामुपनयसि सम्भेदमनघे ! ॥ ५४ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

तवापर्णे ! कर्णेजपनयनपैशुन्यचकिता,
निलीयन्ते तोये नियतमनिमेषाः शफरिकाः।
इयं च श्रीर्बद्धच्छदपुटकपाटं कुवलयं,
जहाति प्रत्यूषे निशि च विघटय्य प्रविशति ॥ ५५ ॥

निमेषोन्मेषाभ्यां प्रलयमुदयं याति जगती,
तवेत्याहुः सन्तो धरणिधरराजन्यतनये !।
त्वदुन्मेषाज्जातं जगदिदमशेषं प्रलयतः,
परित्रातुं शङ्के परिहृतनिमेषास्तव दृशः ॥ ५६ ॥

दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा,
दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे !।
अनेनायं धन्यो भवति न च ते हानिरियता,
वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥ ५७ ॥

अरालं ते पालीयुगलमगराजन्यतनये !,
न केषामाधत्ते कुसुमशरकोदण्डकुतुकम्।
तिरश्चीनो यत्र श्रवणपथमुल्लङ्घ्य विलस-
न्नपाङ्गव्यासङ्गो दिशति शरसन्धानधिषणाम् ॥ ५८ ॥

स्फुरद्गण्डाभोगप्रतिफलितताटङ्कयुगलं,
चतुश्चक्रं शङ्के तव मुखमिदं मन्मथरथम्।
यमारुह्य द्रुह्यत्यवनिरथमर्केन्दुचरणं,
महावीरो मारः प्रमथपतये स्वं जितवते ॥ ५९ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

सरस्वत्याः सूक्तीरमृतलहरीकौशलहरीः,
पिबन्त्याः शर्वाणि ! श्रवणचुलुकाभ्यामविरतम् ।
चमत्कारश्लाघाचलितशिरसः कुण्डलगणो,
झणत्कारैस्तारैः प्रतिवचनमाचष्ट इव ते ॥ ६० ॥

असौ नासावंशस्तुहिनगिरिवंशध्वजपटि !,
त्वदीयो नेदीयः फलतु फलमस्माकमुचितम् ।
वहन्नन्तर्मुक्ताः शिशिरतरनिःश्वासघटिताः,
समृद्ध्या यस्तासां बहिरपि च मुक्तामणिधरः ॥ ६१ ॥

प्रकृत्या रक्तायास्तव सुदति ! दन्तच्छदरुचेः,
प्रवक्ष्ये सादृश्यं जनयतु फलं विद्रुमलता ।
न बिम्बं त्वद्बिम्बप्रतिफलनलाभादरुणितं,
तुलामध्यारोढुं कथमिव विलज्जेत कलया ॥ ६२ ॥

स्मितज्योत्स्नाजालं तव वदनचन्द्रस्य पिबतां,
चकोराणामासीदतिरसतया चञ्चुजडिमा ।
अतस्ते शीतांशोरमृतलहरीमम्लरुचयः,
पिबन्ति स्वच्छन्दं निशि निशि भृशं काञ्जिकधिया ॥६३

अविश्रान्तं पत्युर्गुणगणकथाम्रेडनजपा,
जपापुष्पच्छाया तव जननि ! जिह्वा जयति सा ।
यदग्रासीनायाः स्फटिकदृषदच्छच्छविमयी,
सरस्वत्या मूर्तिः परिणमति माणिक्यवपुषा ॥ ६४ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

रणे जित्वा दैत्यानपहृतशिरस्त्रैः कवचिभिः,
निवृत्तैश्चण्डांशुत्रिपुरहरनिर्माल्यविमुखैः ।
विशाखेन्द्रोपेन्द्रैः शशिशिशिरकर्पूरशकला,
विलीयन्ते मातस्तव वदनताम्बूलकवलाः ॥ ६५ ॥

विपञ्च्या गायन्ती विविधमवदानं पशुपते,–
स्त्वयारब्धे वक्तुं चलितशिरसा साधुवचने ।
त्वदीयैर्माधुर्यैरपहसिततन्त्रीकलरवां,
निजां वीणां वाणी निचुलयति चोलेन निभृतम् ॥६६॥

कराग्रेण स्पृष्टं तुहिनगिरिणा वत्सलतया,
गिरीशेनोदस्तं मुहुरधरपानाकुलतया ।
करग्राह्यं शम्भोर्मुखमुकुरवृन्तं गिरिसुते !,
कथङ्कारं ब्रूमस्तव चिबुकमौपम्यरहितम् ॥ ६७ ॥

भुजाश्लेषान्नित्यं पुरदमयितुः कण्टकवती,
तव ग्रीवा धत्ते मुखकमलनालश्रियमियम् ।
स्वतः श्वेता कालागरुबहुलजम्बालमलिना,
मृणालीलालित्यं वहति यदधो हारलतिका ॥ ६८ ॥

गले रेखास्तिस्रो गतिगमकगीतैकनिपुणे !,
विवाहव्यानद्धत्रिगुणगुणसङ्ख्याप्रतिभुवः ।
विराजन्ते नानाविधमधुररागाकरभुवां,
त्रयाणां ग्रामाणां स्थितिनियमसीमान इव ते ॥ ६९ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मृणालीमृद्वीनां तव भुजलतानां चतसृणां,
चतुर्भिः सौन्दर्यं सरसिजभवः स्तौति वदनैः ।
नखेभ्यः संत्रस्यन् प्रथममथनादन्धकरिपो-
श्चतुर्णां वक्त्राणां सममभयहस्तार्पणधिया ॥ ७० ॥

नखानामुद्द्योतैर्नवनलिनरागं विहसतां,
कराणां ते कान्तिं कथय कथयामः कथमुमे ! ।
कयाचिद्वा साम्यं भजतु कलया हन्त कमलं,
यदि क्रीडल्लक्ष्मीचरणतललाक्षारुणदलम् ॥ ७१ ॥

समं देवि ! स्कन्दद्विपवदनपीतं स्तनयुगं
तवेदं नः खेदं हरतु सततं प्रस्रुतमुखम् ।
यदालोक्याशङ्काकुलितहृदयो हासजनकः,
स्वकुम्भौ हेरम्बः परिमृशति हस्तेन झटिति ॥ ७२ ॥

अमू ते वक्षोजावमृतरसमाणिक्यकुतुपौ,
न सन्देहस्पन्दो नगपतिपताके मनसि नः ।
पिबन्तौ तौ यस्मादविदिततधूसङ्गमरसौ,
कुमारावद्यापि द्विरदवदनक्रौञ्चदलनौ ॥ ७३ ॥

वहत्यम्ब ! स्तम्बेरमदनुजकुम्भप्रकृतिभिः,
समारब्धां मुक्तामणिभिरमलां हारलतिकाम् ।
कुचाभोगो बिम्बाधररुचिभिरन्तः शबलितां,
प्रतापव्यामिश्रां पुरविजयिनः कीर्तिमिव ते ॥ ७४ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

तव स्तन्यं मन्ये धरणिधरकन्ये ! हृदयतः,
पयःपारावारः परिवहति सारस्वत इव ।
दयावत्या दत्तं द्रविडशिशुरास्वाद्य तव यत्,
कवीनां प्रौढानामजनि कमनीयः कवयिता ॥ ७५ ॥

हरक्रोधज्वालावलिभिरवलीढेन वपुषा,
गभीरे ते नाभीसरसि कृतसङ्गो मनसिजः ।
समुत्तस्थौ तस्मादचलतनये ! धूमलतिका,
जनस्तां जानीते जननि ! तव रोमावलिरिति ॥ ७६ ॥

यदेतत्कालिन्दीतनुतरतरङ्गाकृति शिवे !,
कृशे मध्ये किञ्चिज्जननि ! तव तद्भाति सुधियाम् ।
विमर्दादन्योन्यं कुचकलशयोरन्तरगतं,
तनूभूतं व्योम प्रविशदिव नाभीकुहरिणीम् ॥ ७७ ॥

स्थिरो गङ्गावर्तः स्तनमुकुलरोमावलिलता,-
कलावालं कुण्डं कुसुमशरतेजोहुतभुजः ।
रतेर्लीलागारं किमिति तव नाभीति गिरिजे !,
बिलद्वारं सिद्धेर्गिरिशनयनानां विजयते ॥ ७८ ॥

निसर्गक्षीणस्य स्तनतटभरेण क्लमजुषो,
नमन्मूर्तेर्नाभौ वलिषु शनकैस्त्रुट्यत इव ।
चिरं ते मध्यस्य त्रुटिततटिनीतीरतरुणा,
समावस्थास्थेम्नो भवतु कुशलं शैलतनये ! ॥ ७९ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

कुचौ सद्यःस्विद्यत्तरघटितकूर्पासभिदुरौ,
कषन्तौ दोर्मूले कनककलशाभौ कलयता ।
तव त्रातुं भङ्गादलमिति विलग्नं तनुभुवा,
त्रिधा नद्धं देवि ! त्रिवलि लवलीवल्लिभिरिव ॥ ८० ॥

गुरुत्वं विस्तारं क्षितिधरपतिः पार्वति ! निजान्,
नितम्बादाच्छिद्य त्वयि हरणरूपेण निदधे ।
अतस्ते विस्तीर्णो गुरुरयमशेषां वसुमतीं,
नितम्बप्राग्भारः स्थगयति लघुत्वं नयति च ॥ ८१ ॥

करीन्द्राणां शुण्डाः कनककदलीकाण्डपटली,–
मुभाभ्यामूरुभ्यामुभयमपि निर्जित्य भवती ।
सुवृत्ताभ्यां पत्युः प्रणतिकठिनाभ्यां गिरिसुते !,
विजिग्ये जानुभ्यां विबुधकरिकुम्भद्वयमपि ॥ ८२ ॥

पराजेतुं रुद्रं द्विगुणशरगर्भौ गिरिसुते,
निषङ्गौ जङ्घे ते विषमविशिखो बाढमकृत ।
यदग्रे दृश्यन्ते दशशरफलाः पादयुगली,–
नखाग्रच्छद्मानः सुरमुकुटशाणैकनिशिताः ॥ ८३ ॥

श्रुतीनां मूर्धानो दधति तव यौ शेखरतया,
ममाप्येतौ मातः ! शिरसि दयया धेहि चरणौ ।
ययोः पाद्यं पाथः पशुपतिजटाजूटतटिनी,
ययोर्लाक्षालक्ष्मीररुणहरिचूडामणिरुचिः ॥ ८४ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

नमोवाकं ब्रूमो नयनरमणीयाय पदयो,-
स्तवास्मै द्वन्द्वाय स्फुटरुचिरसालक्तकवते ।
असूयत्यत्यन्तं यदभिहननाय स्पृहयते,
पशूनामीशानः प्रमदवनकंकेलितरवे ॥ ८५ ॥

मृषा कृत्वा गोत्रस्खलनमथ वैलक्ष्यनमितं,
ललाटे भर्तारं चरणकमले ताडयति ते ।
चिरादन्तःशल्यं दहनकृतमुन्मीलितवता,
तुलाकोटिक्वाणैः किलिकिलितमीशानरिपुणा ॥ ८६ ॥

हिमानीहन्तव्यं हिमगिरितटाक्रान्तिचतुरौ,
निशायां निद्राणां निशि च परभागे च विशदौ ।
परं लक्ष्मीपात्रं श्रियमतिसृजन्तौ समयिनां,
सरोजं त्वत्पादौ जननि ! जयतश्चित्रमिह किम् ॥८७॥

पदं ते कान्तीनां प्रपदमपदं देवि ! विपदां,
कथं नीतं सद्भिः कठिनकमठीकर्परतुलाम् ।
कथं वा बाहुभ्यामुपयमनकाले पुरभिदा,
यदादाय न्यस्तं दृषदि दयमानेन मनसा ॥ ८८ ॥

नखैर्नाकस्त्रीणां करकमलसङ्कोचशशिभि,-
स्तरूणां दिव्यानां हसत इव ते चण्डि ! चरणौ ।
फलानि स्वस्थेभ्यः किसलयकराग्रेण ददतां,
दरिद्रेभ्यो भद्रां श्रियमनिशमह्नाय ददतौ ॥ ८९ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

कदा काले मातः ! कथय कलितालक्तकरसं,
पिबेयं विद्यार्थी तव चरणनिर्णेजनजलम् ।
प्रकृत्या मूकानामपि च कवितकारणतया,
यदाधत्ते वाणीमुखकमलताम्बूलरसताम् ॥ ९० ॥

पदन्यासक्रीडापरिचयमिवारब्धुमनस,–
श्चरन्तस्ते खेलं भवनकलहंसा न जहति ।
सुविक्षेपे शिक्षां सुभगमणिमञ्जीररणित,–
च्छलादाचक्षाणं चरणकमलं चारुचरिते ॥ ९१ ॥

अराला केशेषु प्रकृतिसरला मन्दहसिते,
शिरीषाभा चित्ते दृषदिव कठोरा कुचतटे ।
भृशं तन्वी मध्ये पृथुरुरसिजारोहविषये,
जगत्रातुं शम्भोर्जयति करुणा काचिदरुणा ॥ ९२ ॥

पुरारातेरन्तःपुरमसि यतस्त्वच्चरणयोः,
सपर्यामर्यादा तरलकरणानामसुलभा ।
तथा ह्येते नीताः शतमखमुखाः सिद्धिमतुलां,
तव द्वारोपान्तस्थितिभिरणिमाद्याभिरमराः ॥ ९३ ॥

गतास्ते मञ्चत्वं द्रुहिणहरिरुद्रेश्वरभृतः,
शिवः स्वच्छच्छायाघटितकपटप्रच्छदपटः ।
त्वदीयानां भासां प्रतिफलनलाभारुणतया,
शरीरी शृङ्गारो रस इव दृशां दोग्धि कुतुकम् ॥९४॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

कलङ्कः कस्तूरी रजनिकरबिम्बं जलमयं,
कलाभिः कर्पूरैर्मरकतकरण्डं निबिडितम् ।
अतस्त्वद्भोगेन प्रतिदिनमिदं रिक्तकुहरं,
विधिर्भूयो भूयो निबिडयति नूनं तव कृते ॥ ९५ ॥

स्वदेहोद्भूताभिर्घृणिभिरणिमाद्याभिरभितो,
निषेव्ये नित्ये त्वामहमिति सदा भावयति यः ।
किमाश्चर्यं तस्य त्रिनयनसमृद्धिं तृणयतो,
महासंवर्ताग्निर्विरचयति नीराजनविधिम् ॥ ९६ ॥

कलत्रं वैधात्रं कति कति भजन्ते न कवयः,
श्रियो देव्याः को वा भवति न पतिः कैरपि धनैः ।
महादेवं हित्वा तव सति ! सतीनामचरमे,
कुचाभ्यामासङ्गाः कुरवकतरोरप्यसुलभः ॥ ९७ ॥

गिरामाहुर्देवीं द्रुहिणगृहिणीमागमविदो,
हरेः पत्नीं पद्मां हरसहचरीमद्रितनयाम् ।
तुरीया कापि त्वं दुरधिगमनिःसीममहिमा,
महामाये ! विश्वं भ्रमयसि परब्रह्ममहिषि ! ॥ ९८ ॥

सरस्वत्या लक्ष्म्या विधिहरिसपत्न्यो विहरते,
रतेः पातिव्रत्यं शिथिलयति रम्येण वपुषा ।
चिरञ्जीवन्नेष क्षपतिपशुपाशव्यतिकरः,
परब्रह्माभिख्यं रसयति रसं त्वद्भजनवान् ॥ ९९ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

प्रदीपज्वालाभिर्दिवसकरनीराजनविधिः,
सुधासूतेश्चन्द्रोपलजललवैरर्घ्यघटना ।
स्वकीयैरम्भोभिः सलिलनिधिसौहित्यकरणं,
त्वदीयाभिर्वाग्भिस्तव जननि वाचां स्तुतिरियम् ॥१००

इति सौन्दर्यलहरी संपूर्णा ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

निम्ननिर्दिष्टपद्यानि कतिपयादर्शेषु लभ्यन्ते ।

समानीतः पद्भ्यां मणिमुकुरतामम्बरमणि-
र्भयादन्तर्वद्धस्तिमिनकिरणश्रेणिमसृणः ।
दधाति त्वद्वक्त्रं प्रतिफलितमश्रान्तिविकचं,
निरातङ्कं चन्द्रान्निजहृदयपङ्केरुहमिव ॥ १ ॥

समुद्भूतस्थूलस्तनभरमुरश्चारु हसितं,
कटाक्षव्याक्षेपाः कतिचनकदम्बद्युतिवपुः ।
हरस्य त्वद्भक्तिं मनसि जनयामास मदनो,
भवत्या ये भक्ताः परिणतिरमीषामियमुमे! ॥ २ ॥

निधे नित्यस्फेरे निरवधिगुणे नीतिनिपुणे,
निराघाटज्ञाने नियमपरचित्तैकनिलये ।
नियत्या निर्मुक्ते निखिलनिगमान्तस्तुतपदे,
निरातङ्के नित्ये निगमय ममापि स्तुतिमिमाम् ॥ ३ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.